वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 379
ISBN-978-93-82071-60-0

आचार्य श्री धर्मसागर विधान

–मंगल प्रेरणा एवं आशीर्वाद –

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

– रचयित्री –

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज के जन्म शताब्दी वर्ष (2013-2014) के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

फोन नं.- (01233) 280184, 280994

Website : www.jambudweep.org, E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

Facebook : jaintirthjambudweep

द्वितीय संस्करण	वीर नि. सं. 2539	मूल्य
1100 प्रतियाँ	ज्येष्ठ शु. पंचमी, श्रुतपंचमी	16/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर महाराज की अक्षुण्ण परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज का जन्मशताब्दी वर्ष (सन् 2013-2014) वर्तमान में चल रहा है। उन्होंने विक्रम संवत् 1970 में पौष शु. पूर्णिमा के दिन गंभीरा ग्राम (राजस्थान) में जन्म लिया था। पुनः उन्होंने अविवाहित रहकर आत्मकल्याण का जो मार्ग अपनाया, उसमें क्रमशः ब्रह्मचारी, क्षुल्लक एवं मुनि दीक्षा धारण कर चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज की परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य बनकर जिनधर्म का जो अलख जगाया वह अविस्मरणीय है।

सन् 1969 में फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को आचार्यपट्ट पर विराजमान होने के साथ ही आचार्यश्री की शिष्य परम्परा में वृद्धि होना प्रारंभ हो गया। उनमें सर्वप्रथम आर्यिका दीक्षा के संस्कार पूज्य अभयमती माताजी' (मेरी गृहस्थावस्था की बड़ी बहन) के हुए पुनः सन् 1971 में हमारी माँ मोहिनी जी ने मगसिर कृ. तीज को आपके करकमलों से आर्यिका दक्षा धारण कर 'रत्नमती' नाम प्राप्त किया। मैंने स्वयं भी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माातजी की पावन प्रेरणा से सन् 1972 में आचार्यश्री से ही आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है और पूज्य ज्ञानमती माताजी तो आचार्य श्री की गुरु बहन ही हैं। उन्होंने आचार्यश्री के जन्म दिवस पौष शु. पूर्णिमा, सन् 2013 को "आचार्य श्री धर्मसागर जन्मशताब्दी महोत्सव वर्ष" मनाने की प्रेरणा प्रदान करके हम सभी को आचार्य श्री का गुणानुवाद करने हेतु अवसर प्रदान किया है।

साहित्य लेखन की श्रृंखला में बीसवीं शताब्दी में इस युग की सरस्वतीस्वरूपा, 300 ग्रन्थों की रचनाकर्त्री, परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के नाम की अनुगूंज आज सम्पूर्ण विश्व में है और उसी क्रम में उनकी शिष्या प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी का नाम भी आज जनमानस से अछूता नहीं है जिन्होंने अपनी गुरु के पदचिन्हों का अनुसरण कर सदैव उनकी आज्ञा का परिपालन करते हुए उनके प्रत्येक कार्य में अपना अमूल्य योगदान तो दिया ही साथ ही शताधिक ग्रन्थों का लेखन कर जिनसंस्कृति को अमूल्य कृतियाँ प्रदान कीं जो सुधी पाठकों के जीवन निर्माण में वर्तमान समय में अत्यन्त उपयोगी हैं।

उसी श्रृंखला में उनकी यह नूतन कृति गुरुभक्ति का ही प्रतिफल है जिसे मात्र एक दिन में रचकर उन्होंने चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज की परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के जीवन से हमें परिचित कराया है। वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला द्वारा उनकी इस कृति का प्रकाशन कर हम गौरव का अनुभव करते हैं।

इस विधान को करके सभी श्रद्धालुभक्त गुरुभक्ति का पुण्य अर्जित करें, यही मंगलकामना है।

प्रस्तावना

–ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

जैन जगत की आध्यात्मिक विभूति श्री कुन्दकुन्द आचार्यदेव ने प्रवचनसार ग्रन्थ में कहा है—"चारित्तं खलु धम्मो" वास्तव में चारित्र ही धर्म है। उस धर्म की जड़ सम्यग्दर्शन है अर्थात् उस धर्म को सम्यग्दर्शन-ज्ञान चारित्र रूप मार्ग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज ने बीसवीं सदी में इन्हीं आगम वाक्यों को अपने जीवन में उतारा और चारित्र मार्ग की सम्यक् प्रतिष्ठापना की। उन्हीं आचार्यदेव की परम्परा में श्री वीरसागर महाराज एवं श्री शिवसागर महाराज ने भी आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होकर चारित्र की महिमा को जगप्रसिद्ध किया और उसी पट्ट परम्परा में तृतीय पट्टाचार्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज हुए जिन्होंने राजस्थान के बूंदी जिले के गम्भीरा ग्राम में पिता बख्तावरमल एवं माता उमराबाई के घर जन्म लेकर वैराग्य धारण कर प्रथमतः आचार्यकल्प श्री चन्द्रसागर महाराज से क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त की, पुनः आचार्य श्री वीरसागर महाराज से ऐलक और मुनि दीक्षा को क्रम-क्रम से प्राप्त कर मोक्षमार्ग के पथिक बन गए और निस्पृहता, निर्लेपता और निर्भीकता की जीवन्त प्रतिमूर्ति के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुए। वि0 सं0 2025 (सन् 1969) में, फाल्गुन शुक्ला अष्टमी तिथि को उन महान गुरुवर को आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज की समाधि (फाल्गुन कृष्णा अमावस को समाधि हुई) के पश्चात् श्री महावीरजी अतिशयक्षेत्र के शान्तिवीरनगर में चतुर्विध संघ द्वारा आचार्यपद प्रदान किया गया जिसका निर्वहन उन्होंने उत्कृष्ट रीति से किया। वस्तुतः धर्म के सजीव प्रतीक एवं मुक्तिपथ के पथिक दिगम्बर साधु ही होते हैं जो संसार भ्रमण में निमग्न जीवों के लिए प्रदीपस्तम्भवत् हैं।

उसी पवित्र एवं अक्षुण्ण परम्परा में उत्तर भारत की देदीप्यमान सूर्यरूप बीसवीं शताब्दी में कुमारिकाओं के लिए त्याग का मार्ग प्रशस्त करने वाली सरस्वतीस्वरूपा, राष्ट्र गौरव, परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का नाम जगतख्यात है जिनके व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व के सम्मुख सम्पूर्ण राष्ट्र नतमस्तक है। पूज्य माताजी ने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करते हुए सदैव देव-शास्त्र गुरु की भक्ति में अपना सर्वस्व समर्पण किया और वही शिक्षा अपने शिष्यवर्ग को प्रदान की है। यही कारण है कि उनके शिष्यवर्ग को देखकर उनकी महिमा का परिज्ञान स्वयमेव हो जाता है।

उनके शिष्यों की शृंखला में एक आदर्श उदाहरण और प्रत्येक शिष्य के लिए प्रेरणास्रोत उनकी सुशिष्या प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी हैं जिन्होंने गुरु के पदचिन्हों पर चलते हुए जैनागम को अपनी शताधिक सारभूत एवं अनमोल कृतियां प्रदान कीं जिनमें से उनकी यह नूतन कृति "आचार्य श्री धर्मसागर विधान" है जिसकी रचना उन्होंने गुरुप्रेरणा से "आचार्य श्री धर्मसागर जन्म शताब्दी वर्ष" के अन्तर्गत की है। इसमें सर्वप्रथम परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा रचित आचार्य श्री धर्मसागर वन्दना (संस्कृत भाषा में) है पुनः पू0 चन्दनामती माताजी द्वारा लिखित पूजन विधान में आचार्य परमेष्ठी के 36 मूलगुणों के 36 अर्घ्य, एक पूर्णार्घ्य एवं सुन्दर जयमाला है जिसे मात्र 1 दिन में करके आप सब गुरुभक्ति के द्वारा भवसमुद्र से तिरने का एक सुन्दर अवलम्बन प्राप्त कर सकते हैं।

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रतिकृति स्वरूप परम पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी प्रज्ञा, ओज, माधुर्य, वत्सलता आदि अनेकानेक गुणों की भण्डार हैं। उनकी लेखनी और उनकी ओजपूर्ण वाणी से दिग्भ्रमित प्राणी को स्वतः ही कल्याण का मार्ग दृष्टिगत हो जाता है। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण हम जैसी बालिकाओं के जीवन निर्माण के लिए प्रेरणास्पद एवं शिक्षा योग्य होने के साथ-साथ वन्दनीय, अभिवन्दनीय और स्तुत्य है, वास्तव में ऐसे महान गुरुओं से ही यह श्रमण संस्कृति पुष्पित और पल्लवित है जो अपने जीवन का प्रत्येक क्षण निज-पर के उत्थान में लगाकर अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने की ओर अग्रसर होते हैं। पूज्य माताजी द्वारा लिखित उनकी अन्य कृतियों की भाँति यह कृति भी प्रत्येक प्राणी के जीवन में गुरुभक्ति की सतत प्रेरणा प्रदान करने में सफलीभूत होवे और पूज्य माताजी चिरायु एवं स्वस्थ रहकर हम सभी पर अपना वात्सल्यमयी वरदहस्त सदैव बनाए रखें यही वीरप्रभू से मंगल कामना है।

बीसवीं शताब्दी के प्रथम आचार्य
चारित्र चक्रवर्ती १०८ श्री शांतिसागर जी महाराज
संक्षिप्त परिचय

स्वस्ति श्री मूलसंघ में कुंदकुंदाम्नाय, सरस्वती गच्छ, बलात्कार गण में बीसवीं शताब्दी में प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य-चारित्र चक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज हुए हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है–

जन्म	– आषाढ़ बदी 6, सन् 1872
निवास स्थान	– भोजग्राम (जिला-बेलगाँव) कर्नाटक
नाम	– सातगौंडा पाटिल
माता-पिता	– माता-सत्यवती, पिता-भीमगौंडा पाटिल
क्षुल्लक दीक्षा	– ज्येष्ठ शु. 13, सन् 1914 ग्राम-उत्तूर (जि. कोल्हापुर) महाराष्ट्र
दीक्षा गुरु	– मुनि 108 श्री देवेन्द्रकीर्ति जी महाराज
ऐलक दीक्षा	– सन् 1917 गिरनार क्षेत्र, स्वयं भगवान के चरण सानिध्य में
मुनि दीक्षा	– फाल्गुन शु. 14, सन् 1920 ग्राम-येरनाल (जिला-बेलगांव) कर्नाटक
दीक्षा गुरु	– मुनि श्री 108 देवेन्द्रकीर्ति जी महाराज
आचार्य पद	– आश्विन शु. 11, सन् 1924 ग्राम-समडोली (जिला-सांगली-महाराष्ट्र) द्वारा-चतुर्विध संघ
चारित्र चक्रवर्ती पद	– सन् 1937 गजपंथा सिद्धक्षेत्र (महा.)
समाधिमरण	– द्वि. भाद्रपद शु. 2, सन् 1955, कुंथलगिरि (सिद्धक्षेत्र)

आचार्य देव ने अनेक दीक्षाएँ देकर चतुर्विध संघ सहित दक्षिण से उत्तर और पूर्वसे पश्चिम तक सारे भारत में मंगल विहार करके दिगम्बर जैन मुनि परंपरा को पुनरुज्जीवित किया। अनेक तीर्थों पर जिनप्रतिमाएँ स्थापित करायीं, षट्खण्डागम ग्रंथ को ताम्रपट्ट पर उत्कीर्ण कराकर जिनवाणी को स्थायित्व प्रदान किया। ऐसे बहुत से जिनधर्म प्रभावना के कार्यों से इस भूतल पर अपने यश को चिरस्थायी कर दिया। आपनेअंत में कुंथलगिरि क्षेत्र पर सल्लेखना लेकर अपने जीवनकाल में अपना आचार्यपद अपने प्रथम शिष्य मुनि श्री वीरसागर को प्रदान कर दिया था। पुनः उनकी परम्परा में द्वितीय पट्टाचार्य श्री शिवसागर मुनिराज हुए, तृतीय पट्टाचार्य श्री धर्मसागर महाराज, चतुर्थ उसके पश्चात् श्री अजितसागर महाराज, पंचम पट्टाचार्य श्री श्रेयांससागर महाराज हुए हैं तथा वर्तमान में आचार्यश्री अभिनंदनसागर महाराज, वर्तमान पट्टाचार्य के रूप में चतुर्विध संघ का संचालन करते हुए जिनधर्म की प्रभावना कर रहे हैं।

चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागराचार्य के प्रथम पट्टशिष्य एवं आचार्य श्री धर्मसागर जी के दीक्षागुरु चारित्रशिरोमणि पूज्य आचार्यरत्न श्री वीरसागर महाराज का परिचय-एक दृष्टि में

जन्म	—आषाढ़ शु. 15, सन् 1876, वि.सं. 1933
ग्राम	—वीर गाँव (जि.-औरंगाबाद, महाराष्ट्र)
नाम	—हीरालाल
जाति एवं गोत्र	—खण्डेलवाल जाति एवं गंगवाल गोत्र
पिता	—श्री रामसुख जैन
माता	—श्रीमती भाग्यवती जैन (भागू बाई)
क्षुल्लक दीक्षा	—फाल्गुन शु. 7, सन् 1923 (वि.सं. 1980)
नाम	—श्री वीरसागर महाराज
मुनिदीक्षा	—आश्विन शु. 11, सन् 1924 (वि.सं. 1981)
ग्राम	—समडोली-महाराष्ट्र
दीक्षागुरु	—चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज
आचार्य पद घोषणा	—कुंथलगिरि में आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज द्वारा प्रथम भाद्रपद शु. 7, सन् 1955 (वि.सं. 2012)
आचार्यपदारोहण	—द्वि. भाद्रपद कृ. 7, सन् 1955 (वि.सं. 2012)
स्थान	—खानिया-जयपुर (राज.)
समाधिमरण	—आश्विन कृ. अमावस्या, सन् 1957 (वि.सं. 2014)
स्थान	—खानिया-जयपुर (राज.)

द्वितीय पट्टाचार्य श्री शिवसागर जी महाराज

दिगम्बर मुनिधर्म की अविच्छिन्न परम्परा में दक्षिण भारत के अन्तर्गत महाराष्ट्र प्रान्त के औरंगाबाद जिले के अड़गाँव ग्राम में रांवका गोत्रीय खण्डेलवाल श्रेष्ठी श्री नेमीचन्द्र जी के गृहांगन में माता दगड़ाबाई की कुक्षि से वि.सं. 1958 में एक पुत्र का जन्म हुआ। जिसका नाम हीरालाल रखा गया।

हीरालाल जी पूर्व जन्म के संस्कारवश बालब्रह्मचारी रहे। आचार्यश्री शांतिसागर महाराज से आपने 28 वर्ष की उम्र में द्वितीय प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए। वि.सं. 2000 में आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की और शिवसागर नाम प्राप्त किया। वि.सं. 2006 में नागौर (राज.) में आषाढ़ शु. 11 को मुनि दीक्षा प्राप्त कर मुनि श्री शिवसागर महाराज बन गए। 8 वर्ष तक गुरु के सान्निध्य में रहकर कठोर तपस्या की पुनः वि.सं. 2014 में आचार्यश्री वीरसागर महाराज का जयपुर खानियाँ में समाधिमरण हो गया तब चतुर्विध संघ ने आपको अपना आचार्य स्वीकार किया। 11 वर्षों तक संघ का कुशल संचालन करने के पश्चात् वि.सं. 2026 (सन् 1969) में अल्पकालीन ज्वर होने से फाल्गुन कृ. अमावस्या के दिन अकस्मात् आपका समाधिमरण हो गया इस परम्परा के वरिष्ठ तपस्वी आचार्यों में श्री शिवसागर महाराज ने अपना नाम अंकित किया है। ऐसी महान आत्मा के चरणों में कृतिकर्मपूर्वक नमोऽस्तु।

तृतीय पट्टाधीश
आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज

भारत की इस वसुन्धरा पर प्राचीनकाल से ही ऋषियों, मुनियों ने जन्म लिया है जिनकी त्याग-तपस्या के बल पर आज भी देश का मस्तक गौरव से ऊँचा उठा हुआ है।

इस युग की तीर्थंकर परम्परा में सर्वप्रथम भगवान आदिनाथ ने जन्म लेकर कर्मभूमि का शुभारंभ किया और आत्मसाधनारूपदैगम्बरी दीक्षा लेकर अनादिकालीन मोक्ष परम्परा का दिग्दर्शन कराया। उनके पश्चात् भगवान महावीर तक 24 तीर्थंकर हुए तथा अंतिम केवली जम्बूस्वामी ने भी इसी पंचमकाल के आरंभ में मोक्ष प्राप्त किया। इसके बाद किसी ने मोक्ष प्राप्त नहीं किया क्योंकि पंचमकाल में जन्म लेने वाले मनुष्यों के लिए साक्षात् मोक्ष का द्वार नहीं खुला है, लेकिन क्रम परम्परा से प्राप्त कराने वाला मोक्ष का मार्ग आज भी सुलभ है, वह है रत्नत्रय की प्राप्ति।

कलिकाल में महान ज्ञान के धारी, भगवान सीमंधर स्वामी की वाणी को साक्षात् हृदयंगम करने वाले आचार्य कुन्दकुन्द हुए, जिनकी शिष्यपरम्परा में आचार्य उमास्वामी आदि बहुत से परम्परागत आचार्य हुए हैं। उसी परम्परा में 19वीं-20वीं शताब्दी की महान विभूति चारित्रचक्रवर्ती आचार्य सम्राट् शांतिसागर महाराज ने दक्षिण प्रान्त में जन्म लिया जिनके निमित्त से सम्पूर्ण भारतवर्ष में जैन साधुओंका निर्बाधरूप से विहार हो रहा है और आज सैकड़ों की संख्या में दिगम्बर जैन साधु दृष्टिगत हो रहे हैं। उस साधु परम्परा के गणनायक तृतीय पट्टाधीश आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज का नाम भी उच्च कोटि में लिया जाता है।

जन्म और शैशव—विक्रम सं. 1970, पौष शुक्ला पूर्णिमा, भगवान धर्मनाथ के केवलज्ञान कल्याणक का पवित्र दिवस, राजस्थान प्रान्त के बूंदी जिलान्तर्गत गंभीरा ग्राम में श्रेष्ठी श्री बख्तावरमल जी की धर्मपत्नी श्रीमती उमरावबाई की कूख से एक पुत्ररत्न ने जन्म लिया, जिसका नाम रखा गया चिरंजीलाल। इनकी जाति खण्डेलवाल और गोत्र छाबड़ा था। चिरंजीलाल अपने माता-पिता के इकलौते बेटे थे। बचपन में ही आपके माता-पिता का असामयिक निधन हो गया अतः आपका जीवन अल्प समय में ही माँ-पिता के लाड़-प्यार भरे संरक्षण से वंचित रह गया था किन्तु आपके ताऊ श्री कँवरीलाल की पुत्री दाखाबाई, जो

आपकी बड़ी बहन थीं, उनका प्यार व संरक्षण मिला। दाखाबाई बामणवास में रहती थीं, आप भी वहीं जाकर उनके पास रहने लगे। बहिन भी पति वियोग से दुखी थीं अतः आपका सानिध्य उनके भी दुःख का पूरक बना और भाई-बहन का निर्मल स्नेह बहिन के जीवनपर्यंत बना रहा।

लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा—पुरातन परम्परा में लौकिक शिक्षण को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। इष्टवियोगज दुःखों के निमित्त से भी चिरंजीलाल का प्रारंभिक अध्ययन अति अल्प ही रहा। बचपन में ही धार्मिक अनभिज्ञतावश आप मिथ्यादृष्टि देवी-देवताओं के मंदिर जाते रहे और उनकी भक्ति करते रहे। एक दिन आप जैन मंदिर में गए, वहाँ पर एक पंडित जी शास्त्र प्रवचन में मिथ्यात्व और सम्यक्त्व का प्रतिपादन कर रहे थे। वह बात आपके मस्तिष्क में बैठ गई और आपने मिथ्यात्व का त्याग कर दिया। बहिन दाखाबाई अच्छी धर्मपरायण महिला थीं, उनके संपर्क एवं अनुशासन में रहकर चिरंजीलाल जिनेन्द्र भगवान के कट्टर भक्त बन गए और प्रतिदिन मंदिर जाने लगे। सत्य है कि आत्महित की ओर प्रेरित करने वाले बंधु ही सच्चे बंधु होते हैं।

व्यापार—जीवन निर्वाह और शरीर का पोषण करने के लिए व्यापार भी करना पड़ता है इसी उद्देश्य से आपने 14-15 वर्ष की अवस्था में छोटी-सी दुकान खोली। संतोषवृत्ति तो थी ही अतः जब दुकान पर आजीविकायोग्य लाभ हो जाता, उसी समय दुकान बंद कर देते तथा अपना शेष समय शास्त्र स्वाध्याय में लगाते।

रत्नत्रय मार्ग की ओर बढ़ते कदम—धार्मिक वृत्ति होते हुए भी जैन साधुओं का कभी निकटतम सानिध्य प्राप्त नहीं होने से धर्मकार्यों की ओर झुकाव नहीं हो पाया था। इसी मध्य नैनवाँ नगर में परमपूज्य आचार्यकल्प 108 श्री चन्द्रसागर जी महाराज का चातुर्मास हो गया। उन सिंहवृत्ति के धारक, आगम पोषक गुरु का समागम प्राप्त कर आपके जीवन में नया मोड़ आया और शुद्ध भोजन का नियम लेकर आहार देने लगे। साथ-साथ पूजा-दानादि षट् क्रियाओं का भी दृढ़तापूर्वक पालन करने लगे तथा आजीवन ब्रह्मचारी रहने का संकल्प मन में कर लिया।

कुछ ही दिनों बाद इंदौर नगर में पूज्य आचार्यकल्प श्री वीरसागर जी महाराज का समागम भी आपको प्राप्त हुआ। वहाँ पर पूज्य श्री की प्रेरणा से दो प्रतिमा के व्रतों को धारण कर लिया। जब आचार्यकल्प चन्द्रसागर महाराज का चातुर्मास बड़नगर में था, उस समय आप बहन दाखाबाई के साथ गुरु के दर्शन

के लिए गये और वहीं पर आपने सप्तम प्रतिमारूप ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिया। अब आपके हृदय में दीक्षा की प्रबल भावना जाग्रत होने लगी। गुरु के सानिध्य में एकदेश संयम का पालन तो हो ही रहा था, अवसर पाकर इन्होंने गुरुदेव के समक्ष दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की और वि.सं. 2001 चैत्र शुक्ला सप्तमी की मंगल बेला में बालूज नगर के जनसमूह के मध्य क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त की। दीक्षित नाम क्षुल्लक भद्रसागर जी रखा गया। गुरु वियोग का दुःख भी आपको अल्प समय में ही प्राप्त हो गया। वि.सं. 2001 फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा के दिन आचार्यकल्प चन्द्रसागर महाराज का सल्लेखनापूर्वक स्वर्गवास हो गया। इसके अनंतर क्षुल्लक भद्रसागर जी आचार्यकल्प श्री वीरसागर जी के सानिध्य में आ गये और क्षुल्लक अवस्था में 6 चातुर्मास गुरु के समीप ही किये। इसके बाद वि.सं. 2007 में फुलेरा नगर में पंचकल्याणक के अवसर पर तपकल्याणक के दिन ऐलक दीक्षा ग्रहण की किन्तु अब 1 लंगोटी भी आपको भार प्रतीत होती थी अतः 6 माह पश्चात् फुलेरा में ही कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी सं. 2008 के दिन आपको पूर्ण महाव्रतरूप दैगम्बरी दीक्षा प्राप्त हो गई।

अब आप मुनि धर्मसागर जी महाराज के नाम से प्रसिद्ध हो गये। आपने गुरु के सानिध्य में रहकर सम्मेदशिखर आदि कई तीर्थ क्षेत्रों की वंदनाएँ कीं। वि.सं. 2012 में आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज ने अपनी सल्लेखना के समय कुंथलगिरि से अपना आचार्यपट्ट वीरसागर मुनिराज को प्रदान किया था तदनुसार जयपुर-खानियाँ में वर्षायोग के समय विशेष समारोहपूर्वक चतुर्विध संघ ने सं. 2012 में ही आचार्यकल्प वीरसागर महाराज को अपना आचार्य स्वीकार किया। आचार्य श्री वीरसागर महाराज ने कुशलतापूर्वक आचार्यपट्ट को निभाया और वि.सं. 2014 में जयपुर चातुर्मास में आश्विन कृ. अमावस्या को आचार्यश्री की सल्लेखनापूर्वक समाधि हो गई। वीरसागर महाराज की समाधि के अनंतर समस्त संघ ने उनके प्रधान शिष्य मुनि श्री शिवसागर जी को आचार्यपट्ट प्रदान किया।

संघ से पृथक् विहार—अब आचार्य शिवसागर महाराज के संघ का विहार गिरनार की तरफ हुआ। गिरनार जी की वंदना करके वापस लौटते समय ब्यावर (राज.) में संघ का चातुर्मास हुआ। मुनि धर्मसागर जी ने एक और मुनिराज पद्मसागर को साथ लेकर संघ से पृथक् विहार करके आनंदपुरकालू में वर्षायोग स्थापित किया। इसके अनंतर अजमेर और बूंदी में चातुर्मास के पश्चात् बुंदेलखण्ड की यात्रा का विचार बनाया। अब आपके साथ दो मुनिराज थे। बुंदेलखण्ड में

इस संघ के विहार से अभूतपूर्व धर्मप्रभावना हुई। 3 वर्षों की इस यात्रा के पश्चात् आपने मालवा प्रान्तीय तीर्थक्षेत्रों की वंदना की तथा राजस्थान के विभिन्न प्रान्तों में भ्रमण करके धर्मप्रभावना के साथ शिष्य- परम्परा में भी वृद्धि की। अब आपके साथ 4 मुनिराज एवं 1 ऐलक जी थे।

गुरु का संयोग-वियोग और आचार्यपट्ट—वि.सं. 2024 तक आपने अपने लघु संघ सहित विभिन्न प्रान्तों में भ्रमण किया। अनन्तर 2025 में बिजौलिया नगर में चातुर्मास सम्पन्न करके आपने श्री महावीर जी शांतिवीर नगर में होने वाले पंचकल्याणक महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए विहार कर दिया। यहाँ पर आचार्य शिवसागर महाराज का संघ भी विराजमान था। कहते हैं उस समय उभय संघ सम्मिलन का दृश्य अभूतपूर्व था। 10 वर्षों से बिछुड़े हुए गुरु भाइयों का यह अद्वितीय मिलन था। आचार्य शिवसागर महाराज को अचानक ज्वर चढ़ जाने से फाल्गुन कृष्णा अमावस को आकस्मिक उनका स्वर्गवास हो गया। समस्त संघ में शोकाकुल सा वातावरण हो गया।

चूँकि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न होनी थी और 11 व्रतियों की दीक्षाओं का निर्णय भी पूर्व से ही था अतः आठ दिनों तक समस्त संघ के ऊहापोह के अनन्तर अष्टमी को मुनि धर्मसागर जी को आचार्यपट्ट प्रदान किया गया। उसी दिन आपके करकमलों से 6 मुनि, 2 आर्यिका, 2 क्षुल्लक और 1 ऐलक ऐसी 11 दीक्षाएँ हुईं। ये वे ही दीक्षार्थी थे जिन्होंने आचार्य शिवसागर जी के समय दीक्षा की प्रार्थना की थी। तब से लेकर कई वर्षों तक आप अपने विशाल संघ का संचालन करते हुए पूरे भारतवर्ष में जैनधर्म की ध्वजा फहराई। समय-समय पर आपके करकमलों से बहुत सी दीक्षाएँ भी सम्पन्न हुईं हैं।

2500वें निर्वाण महोत्सव पर प्रभावना—ईसवी सन् 1974 में जब तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर राजधानी दिल्ली में मनाने की योजना चल रही थी, उस समय आचार्य धर्मसागर महाराज का संघ अलवर (राज.) में था। पूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी दिल्ली में अपने संघ सहित थीं। आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज एवं उपाध्याय मुनि श्री विद्यानंद जी महाराज भी दिल्ली में विराजमान थे। पूज्य माताजी के हृदय में यह प्रबल इच्छा थी कि ऐसे समय आचार्य धर्मसागर जी का संघ दिल्ली अवश्य आना चाहिए। माताजी ने समाज के गणमान्य व्यक्तियों के समक्ष विचार रखे किन्तु सबने इस विशाल संघ को और उस परम्परा की

क्रियात्मक शुद्धि के पालन हेतु अपनी असमर्थता व्यक्त की किन्तु माताजी कहाँ मानने वाली थीं उन्होंने डॉ. लालबहादुर शास्त्री, लाला श्यामलाल जी ठेकेदार, डॉ. कैलाशचंद, कम्मोजी, पन्नालाल जी तेजप्रेस, आदि कई लोगों को आदेश देकर आचार्यसंघ के पास निवेदन करने को भेजा। दिल्ली गांधीनगर की जैन समाज ने भी माताजी के आदेशानुसार पूर्ण सहयोग प्रदान कर आचार्यश्री के पास जाकर श्रीफल चढ़ाकर दिल्ली पदार्पण के लिए आग्रह किया।

सब के अथक प्रयासों से आचार्यसंघ का दिल्ली लाल मंदिर में चातुर्मास स्थापित हुआ और निर्वाण महोत्सव की प्रत्येक गतिविधि में आपका अंतिम निर्णय लिया जाता था। दिगम्बर सम्प्रदाय के परम्परागत पट्टाचार्य होने से आपका विशेष अतिथि के रूप में राष्ट्रीय समिति में भी नाम रखा गया था। आपने यहाँ पर भी निर्भयतापूर्वक अपनी परम्परा का पालन किया। दिल्ली में आपके ससंघ मंगल विहार से काफी धर्म प्रभावना हुई। 8 दीक्षाएँ भी दरियागंज के विशाल प्रांगण में सम्पन्न हुईं। सन् 1974 में ही पूज्य आर्यिका ज्ञानमती माताजी द्वारा अनुवादित अष्टसहस्री ग्रंथराज त्रिलोक शोध संस्थान ने प्रकाशित कराया जो कि वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला का प्रथम पुष्प था। वह विशाल जनसमूह के मध्य महापौर द्वारा विमोचन होकर पूज्य माताजी द्वारा दोनों गुरुओं (आचार्य धर्मसागर, आचार्य देशभूषण) के करकमलों में समर्पित किया गया था तथा सम्यग्ज्ञान हिन्दी मासिक का विमोचन भी आपके करकमलों से सम्पन्न हुआ था। जिसमें आपका पूर्ण शुभाशीर्वाद माताजी को व संस्थान को प्राप्त हुआ था।

दिल्ली महानगर में विविध कार्यक्रमों को सम्पन्न करके आपने गाजियाबाद, बड़ौत, मेरठ, सरधना, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर आदि उत्तरप्रदेश के नगरों में भ्रमण किया और हस्तिनापुर की पवित्र भूमि पर आपका ससंघ मंगल पदार्पण हुआ। भगवान शांति-कुंथु-अरहनाथ के चार-चार कल्याणक, महाभारत का युद्ध, सात सौ मुनियों पर उपसर्ग, दानतीर्थ का प्रवर्तक होने से इस तीर्थ को ऐतिहासिकता भी प्राप्त है। यहाँ पूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान ने जम्बूद्वीप रचना के निर्माण हेतु भूमि का क्रय किया और सर्वप्रथम वहाँ पर 1008 भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण 7 हाथ खड्गासन (सवा नौ फुट ऊँची) प्रतिमा को विराजमान करने हेतु एक छोटे से कमरे का निर्माण कराया गया। उसी समय प्राचीन तीर्थक्षेत्र पर नवनिर्मित बाहुबली मंदिर और जलमंदिर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा

का मुहूर्त निकला। पूज्य माताजी के निर्देशानुसार तीर्थक्षेत्र कमेटी के महामंत्री बाबू सुकुमारचंद जी ने सोलापुर निवासी पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री को आमंत्रित किया। प्रतिष्ठा मुहूर्त के अनुसार समस्त विधि विधान सम्पन्न हुए। पूज्य आचार्यश्री ससंघ व मुनि विद्यानंद जी वहीं पर विराजमान थे। जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान महावीर की प्रतिमा जब खड़ी की गईं, उस समय आचार्यश्री ने अपने हाथों से उसके नीचे अचल यंत्र स्थापित किया और तीनों जगह की प्रतिमाओं पर आपने ही अपने करकमलों से सूरिमंत्र प्रदान किया।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सानंद सम्पन्न होने के पश्चात् संघस्थ वयोवृद्ध मुनि श्री वृषभसागर जी महाराज की सल्लेखना के निमित्त से संघ यहाँ 3-4 महीने ठहरा और शास्त्रोक्त विधि के अनुसार उनकी महामंत्र स्मरणपूर्वक हस्तिनापुर में समाधि हुई। उस समय हस्तिनापुर का दृश्य चतुर्थकाल का सा आनंद प्रदान कर रहा था। मुझे भी समस्त साधुओं के असीम वात्सल्य और आहारदान का सौभाग्य प्राप्त हुआ। 13-13 साधुओं का भी एक साथ मेरे चौके में पड़गाहन हुआ जो मेरे जीवन के लिए चिरस्मरणीय बन गया।

त्रिलोक शोध संस्थान को आशीर्वाद—आचार्यश्री जब अपने संघ सहित हस्तिनापुर से विहार करने लगे, उस समय ज्ञानमती माताजी ने उनके समक्ष यहां रहने के बारे में ऊहापोह किया। तब आचार्यश्री ने बड़े प्रसन्नतापूर्वक शब्दों में माताजी से कहा कि—"आपको जंबूद्वीप रचना पूर्ण होने तक यहीं रहना चाहिए। साधु को तीर्थक्षेत्र पर अधिक दिनों तक रहने में कोई बाधा नहीं है।" आपके आशीर्वाद से पूज्य माताजी की मंगल प्रेरणा से स्थापित त्रिलोक शोध संस्थान चहुँमुखी प्रगति कर रहा है।

4 जून 1982 को दिल्ली के ऐतिहासिक लालकिले के मैदान से प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा प्रवर्तित जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति ने भी आपके मंगल आशीर्वाद से देश के विभिन्न प्रान्तों में भ्रमण किया। राजस्थान प्रान्त में भ्रमण के समय 27 अक्टूबर 1982 को लोहारिया ग्राम में आपके ससंघ सानिध्य में ज्ञानज्योति का भव्य आयोजन किया गया जिसमें विशिष्ट श्रीमान-विद्वान् भी पधारे थे। वहाँ पर बोलियों के बाद आपने ज्योति को मंगल शुभाशीर्वाद प्रदान किया और बाद में अपने विशाल संघ सहित उसकी शोभायात्रा के साथ भ्रमण कर धर्मवात्सल्य और प्रभावना का परिचय दिया।

ऐसे आचार्यपरमेष्ठी के चरणों में शतशः नमोस्तु।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.
जन्मतिथि– आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)
जाति– अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–** गोयल, **नाम–** कु. मैना
माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन
आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत– ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन
क्षुल्लिका दीक्षा– चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। **नाम–** क्षुल्लिका वीरमती
आर्यिका दीक्षा– वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।
साहित्यिक कृतित्व– अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।
डी.लिट्. की मानद उपाधि– सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।
तीर्थ निर्माण प्रेरणा– हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा- भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमामहावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थइत्यादि।
महोत्सव प्रेरणा– पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डलविधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**
शैक्षणिक प्रेरणा– 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।
रथ प्रवर्तन प्रेरणा– जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

पुस्तक की रचयित्री, पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका
श्री चन्दनामती माताजी का संक्षिप्त परिचय

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नाम– प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी
दीक्षा पूर्व नाम– ब्र. कु. माधुरी शास्त्री
जन्मतिथि– 18-5-1958 (ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या)
जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.
माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जी जैन
भाई– चार (कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी,कैलाशचंद, स्व. प्रकाशचंद, सुभाषचंद)
बहन– आठ (गणिनी आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी एवं आर्यिका श्री अभयमती माताजी सहित)
ब्रह्मचर्य व्रत– 25 अक्टूबर 1969 को जयपुर में 2 वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत एवं सन् 1971, अजमेर में आजन्म ब्रह्मचर्य सुगंधदशमी को गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।
धार्मिक अध्ययन– 1972 में सोलापुर से ''शास्त्री'' की उपाधि, 1973 में ''विद्यावाचस्पति'' की उपाधि।
द्वितीय एवं सप्तम प्रतिमा के व्रत– सन् 1981 एवं 1987 में गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।
आर्यिका दीक्षा– हस्तिनापुर में 13-8-1989, श्रावण शु. 11 को गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी से
प्रज्ञाश्रमणी की उपाधि– 1997 में चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान के पश्चात् राजधानी दिल्ली में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा।
पीएच.डी. की मानद उपाधि– तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को विश्वविद्यालय में।
साहित्यिक योगदान– चारित्रचन्द्रिका, तीर्थंकर जन्मभूमि विधान, नवग्रहशांति विधान, भक्तामर विधान, समयसार विधान आदि लगभग 100 पुस्तकों का लेखन, वर्तमान में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा ''षट्खण्डागम (प्राचीनतम जैन सूत्र ग्रंथ) एवं ''भगवान ऋषभदेव चरितम्'' की संस्कृत टीकाओं का हिन्दी अनुवाद कार्य, 'समयसार' एवं 'कुन्दकुन्दमणिमाला' का हिन्दी पद्यानुवाद, भगवान महावीर स्तोत्र की संस्कृत एवं हिन्दी टीका, भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोष, जैन वर्शिप (अंग्रेजी में पूजा, भजन, बारहभावना आदि), भजन (लगभग 1000), पूजन, चालीसा, स्तोत्र इत्यादि लेखन की अद्भुत क्षमता, हिन्दी भाषा के साथ-साथ अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं की सिद्धहस्त लेखिका, गणिनी ज्ञानमती गौरव ग्रंथ एवं भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि ग्रंथ की प्रधान सम्पादिका। वर्तमान में 'इन्साइक्लोपीडिया ऑफ जैनिज्म डॉट कॉम' (ऑनलाईन जैन विश्वकोश) के सम्पादन में संलग्न।

आचार्य श्री धर्मसागर विधान प्रारम्भ

वन्दना

–बसंततिलका छंद–

सम्यक्त्वशीलगुणमण्डितपुण्यगात्रः।
रत्नत्रयैकनिधिधारणपुण्यपात्रम् ।।
लेश्याविशुद्धपरिणामशुभोपयोगी।
तं धर्मसागरमुनीन्द्रमहं प्रवन्दे।।1।।

मूलोत्तरान् गुणगणान् स्वयमेव धत्ते।
शिष्यांश्च धारयति मुक्तिपथे धुरीणः।।
सन्मार्गमादिशति सत्त्वहितैकबुद्ध्या।
तं धर्मसागरमुनीन्द्रमहं प्रवन्दे।।2।।

श्रीशांतिसागरसुवंशलतां प्रसिंचन्।
संघाधिपो यतिवरो भविवृंदवंद्यः।।
सार्वो गभीरहृदयो व्रतवान् मुमुक्षुः।
तं धर्मसागरमुनीन्द्रमहं प्रवन्दे।।3।।

भव्याब्जबोधनविधौ भुवि यो विवस्वान्।
शिष्यान् पुनाति किल जंगमतीर्थतुल्यः।।
भक्तान् जनान् दिशति ज्ञानमतिं श्रियं यः।
तं धर्मसागरमुनीन्द्रमहं प्रवन्दे।।4।।

अनुष्टुप—**मासोपवासिना वृद्धैर्बालैर्विज्ञैश्च साधुभिः।**
आर्याभिस्त्वं चतुःसंघैर्वृतो जीयाच्च भूतले।।5।।

अथ गुरुपूजा प्रतिज्ञापनाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–स्थापना (नरेन्द्र छंद) –

जिनशासन में परम पूज्य परमेष्ठी पाँच कहाते हैं।
वर्तमान में त्रय परमेष्ठी उनका रूप दिखाते हैं।।
धर्मसिंधु आचार्यप्रवर उनमें तृतीय परमेष्ठी हैं।
उनकी पूजन हेतु यहाँ आह्वानन स्थापन विधि है।।1।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्री धर्मसागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं आचार्य श्री धर्मसागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं आचार्य श्री धर्मसागरमुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं स्थापनं।

–अष्टक –

मुनिमन सम उज्वल जल लेकर, झारी से जलधारा कर लूँ।
संसारभ्रमण हो नष्ट मेरा, ऐसी आतमशक्ती भर लूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।1।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मम सम शीतल चंदन ले, गुरुचरणों में चर्चन कर लूँ।
भव ताप विनाशन हो मेरा, ऐसा शीतल निज मन कर लूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।2।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मन सम दृढ़ अक्षत लेकर, त्रय पुंज चढ़ा गुणपुंज भरूँ।
निज अक्षय पद की प्राप्ति हेतु, मन में दृढ़ सम्यक्भाव धरूँ।।

श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।3।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मन सम अविकारी, प्रकृति के पुष्पों की अंजलि भर लूँ।
हो कामव्यथा उपशांत मेरी, यह ज्ञानाञ्जलि अर्पण कर दूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मन सम मिष्ट मधुर व्यंजन, पूजन के हेतु थाल भर लूँ।
हो क्षुधा रोग उपशांत मेरा, कुछ त्याग भाव मन में धर लूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।5।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मन सम वैरागी परिणति से, मोह तिमिर का नाश करूँ।
घृत दीपक से आरति करके, निज आतमसुख को प्राप्त करूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।6।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मन सम सुरभित धूप लिये, अग्नी में आज दहन कर लूँ।
ऐसी आतम शक्ती पाऊँ, सब संकट कष्ट सहन कर लूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।7।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि पद सम उत्तम फल लेकर, मुनि के पद में अर्पण कर लूँ।
उत्तम शिवफल की प्राप्ति हेतु, निज को निज में स्थिर कर लूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।8।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि पद सम ले अनमोल अनघ पद हेतु अर्घ्य का थाल भरूँ।
''चन्दनामती'' आठों द्रव्यों को ले अनर्घ्यपद प्राप्त करूँ।।
श्री धर्मसागराचार्य प्रवर, मुनिवर को है वंदन मेरा।
खिल जावे ज्ञानकली मेरी, इस हेतु करूँ अर्चन तेरा।।9।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्रीधर्मसागरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा –

स्वच्छ सुगंधित नीर ले, डालूँ गुरुपद धार।
रत्नत्रय की प्राप्ति के, हेतु करूँ जलधार।।10।।

शांतये शांतिधारा।

तरह तरह के पुष्प ले, गुरुपद में विकिरन्त।
पुष्पांजलि माध्यम बने, हो आत्मीक सुगंध।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

चउ संघ के आधार, धर्मसिन्धु आचार्य थे।
उन पद पूजन हेतु, पुष्पाञ्जली चढ़ावते।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

पंचाचारों में प्रथम, सम्यग्ज्ञानाचार।
धर्मसिन्धु आचार्य में हुआ ज्ञान साकार।।
उनकी पूजन हेतु मैं, लाया अर्घ्य सजाय।
यही भावना हृदय में, पाऊँ मोक्ष उपाय।।1।।

ॐ ह्रीं ज्ञानाचारगुणसहित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचारों में दुतिय, कहा दर्शनाचार।
धर्मसागराचार्य में, हुआ यही साकार।।
उनकी पूजन हेतु मैं, लाया अर्घ्य सजाय।
यही भावना हृदय में, पाऊँ मोक्ष उपाय।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनाचारगुणसहित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरह भेदों से सहित, है चारित्राचार।
धर्मसिन्धु आचार्य ने पाला यह आचार।।
उनकी पूजन हेतु मैं, लाया अर्घ्य सजाय।
यही भावना हृदय में, पाऊँ मोक्ष उपाय।।3।।

ॐ ह्रीं चारित्राचार गुणसहित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहर भेदों युत कहा, सम्यक् तप आचार।
धर्मसिंधु आचार्य थे, तपोमूर्ति साकार।।
उनकी पूजन हेतु मैं, लाया अर्घ्य सजाय।
यही भावना हृदय में, पाऊँ मोक्ष उपाय।।4।।

ॐ ह्रीं तपाचारगुणसहित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम आचारज कहा, सम्यक् वीर्याचार।
धर्मसिंधु आचार्य ने, किया इसे साकार।।

उनकी पूजन हेतु मैं, लाया अर्घ्य सजाय।
यही भावना हृदय में, पाऊँ मोक्ष उपाय।।5।।

ॐ ह्रीं वीर्याचारगुणसहित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(6)

तर्ज–आवाज देकर.....

दशधर्मयुत गुरु को अर्घ्य चढ़ाएं।
आचार्य परमेष्ठि को मन में ध्याएं।।टेक.।।
प्रथम धर्म उत्तम क्षमा को जो पालें।
सहनशीलता से वे उपसर्ग टालें।।
हम ऐसे गुरुपद में मस्तक झुकाएँ।
आचार्य परमेष्ठि को मन में ध्याएं।।1।।
है यह प्रार्थना मन में समता प्रगट हो।
हे गुरुदेव! कष्टों में विचलित न मन हो।।
यही भावना 'चन्दनामति' बनाएं।
आचार्य परमेष्ठि को मन में ध्याएं।।2।।

ॐ ह्री उत्तमक्षमाधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(7)

तर्ज– हाय हाय ये जालिम जमाना.....

धर्म मार्दव को गुरूवर ने पाला, उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ाना।।टेक.।।
मृदुता गुण से परम प्रिय थे गुरुवर।
मान तज के बने धर्मसागर।।
हमको भी उनसे यह गुण है पाना, उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ाना।।1।।
फल सहित वृक्ष झुकता सदा है।
गुरु के वचनों से ऐसा सुना है।।
धर्मसागर में था गुण खजाना, उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ाना।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दवधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(8)

तर्ज–दिन रात मेरे स्वामी.....

आर्जव धरम के धारक, गुरु पद में अर्घ्य लाए। गुरु पद.....
आचार्य धर्मसागर से गुणनिधी को पाएं।।टेक.।।
यह पुण्यकर्म ही था, धारण की जैनदीक्षा।
बनकर गुणों के सागर, आतम स्वरूप ध्याएं।।1।।
श्रीधर्मसिन्धु गुरु में, देखी सदा सरलता।
अतएव अर्घ्य लेकर, उनके चरण चढ़ाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम आर्जवधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(9)

तर्ज–झिलमिल सितारों का.....

श्रीधर्मसागर की पूजा रचाएं, चरणों में उनके अर्घ्य चढ़ाएं।
सत्य धरम के धारक गुरु को मन में ध्याएं।।श्री धर्मसागर..।।टेक0।।
उत्तम सत्य वचन को सूरी पूर्णरूप से धरते हैं।
छत्तिस मूलगुणों के पालन में वे तत्पर रहते हैं।।
उन भोले-भाले गुरुवर को ध्याएं, चरणों में उनके अर्घ्य चढ़ाएं।।1।।
गुरुवर हमने जनम जनम में, झूठ बहुत ही बोले हैं।
स्वार्थ सिद्धि के कारण अपने, वचन न हमने तोले हैं।।
सत्य महाव्रति को अब ध्याएं, चरणों में उनके अर्घ्य चढ़ाएं।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(10)

तर्ज–जिस गली में तेरा.....

धर्मसागर गुरूपद की अर्चा करें,
धर्म की ज्योति मन में जलेगी तभी।
शौच उत्तम धरम से सहित सूरि की,
वंदना मन को पावन करेगी कभी।।टेक.।।

हीरा सा जब मनुज तन मिला था उन्हें।
लोभ में नहिं फंसे लीन हो धर्म में
लोभ में नहिं फंसे लीन हो धर्म में।।
उन परमगुरु के चरणों में है वन्दना,
वंदना मन को पावन करेगी कभी।।1।।
अर्घ्य का थाल आचार्य के पदकमल।
कर समर्पण तभी नर जनम हो सफल।।
कर समर्पण तभी नर जनम हो सफल।।
''चन्दनामति'' गुरूपद में है वन्दना।
वंदना मन को पावन करेगी कभी।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम शौचधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(11)

तर्ज-बाबुल की दुआएं.....

उत्तम संयम का पालन कर, श्री धर्मसिन्धु शिवद्वार चले।
उन पद में अर्घ्य चढ़ा करके, हमको भी गुणभंडार मिले।।टेक.।।
इंद्रिय संयम प्राणी संयम से, संयम द्वैविध माना है।
इनका पालन करने वालों को, शिवपद निश्चित पाना है।।
आचार्य वीरसागर गुरु से, दीक्षित ये मुनि आचार्य बने।
उन पद में अर्घ्य चढ़ा करके, हमको भी गुणभंडार मिले।।1।।
हम अष्टद्रव्य का थाल सजा, गुरुचरण चढ़ाने आये हैं।
हमको भी संयम प्राप्ती हो, यह आशा लेकर आये हैं।।
''चन्दनामती'' गुरुपद वंदन कर मुक्तिपंथ साकार मिले।
उन पद में अर्घ्य चढ़ा करके, हमको भी गुणभंडार मिले।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम संयमधर्मसमिन्वत श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(12)

तर्ज–हम लाए हैं तूफान से.....

हम वीतरागि गुरुचरण में अर्घ्य चढ़ाएं।
आचार्य धर्मसागर को शीश नमाएं।।टेक.।।
उत्तम तपो धरम को पाल ये मुनी बने।
वे बाह्य अन्तरंग तप से सूरिवर बने।।
तपशक्ति प्राप्ति हेतु गुरु की भक्ति रचाएं।
आचार्य धर्मसागर को शीश नमाएं।।1।।
नीरादि अष्ट द्रव्य लेके अर्घ्य बनाया।
निजपद अनर्घ्य प्राप्ति का सौभाग्य है आया।।
बस इसलिए आचार्य पद को नित्य हम ध्याएं।
आचार्य धर्मसागर को शीश नमाएं।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम तपोधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(13)

तर्ज–महावीरा भोले भाले, तुमको लाखों प्रणाम.....

हे धर्मसिन्धु गुरुदेव, मेरा अर्घ्य करो स्वीकार-2।
हे त्यागमूर्ति मुनिराज, मेरा नमन करो स्वीकार-2।।टेक.।।
चार दान के भेद बताये
गुरुवर उत्तम त्याग निभायें।।
तुम त्याग के हो अवतार, मेरा अर्घ्य करो स्वीकार।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(14)

तर्ज–माई रे माई.....

उत्तम आकिञ्चन्य धर्म के, धारक गुरु को वन्दन।
धर्मसागराचार्य गुरू के, पद में अर्घ्य समर्पण।।
बोलो जय जय जय, बोलो जय जय जय।।टेक.।।

चौबिस भेद परिग्रह के, त्यागी होते हैं मुनिवर।
नग्न दिगम्बर वेष सहित, छत्तिस गुणधारी गुरुवर।।
ऐसे श्री आचार्यप्रवर, परमेष्ठी को है वन्दन।
धर्मसागराचार्य गुरू के, पद में अर्घ्य समर्पण।।
बोलो जय जय जय, बोलो जय जय जय।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तम आकिञ्चन्यधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(15)

तर्ज–बार बार तोहे क्या समझाऊँ .....

ब्रह्मचर्य व्रतधारी गुरुवर, नमन करो स्वीकार।
धर्मसिन्धु मुनिवर मेरी, नैय्या लगा दो पार।।टेक.।।
कामबन्ध की कथा छोड़कर, बने बाल ब्रह्मचारी।
वीतराग छवि के द्वारा ही, शीघ्र मिले शिवनारी।।
युग युग तक गूंजेगी गुरुवर, तेरी जयजयकार।
धर्मसिन्धु मुनिवर मेरी, नैय्या लगा दो पार।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्यधर्मसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-अडिल्ल छन्द-

बारह तप में पहला अनशन तप कहा।
छह बहिरंग तपों में प्रथम यही रहा।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।16।।

ॐ ह्रीं अनशन तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजा तप ऊनोदर महिमायुक्त है।
भूख से कम भोजन करना उपयुक्त है।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।17।।

ॐ ह्रीं अवमौदर्य तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृत्त परीसंख्यान तपस्या मुनि करें।
नियम अटपटा ले भोजनचर्या करें।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।18।।

ॐ ह्रीं वृत्तपरिसंख्यान तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूध दही घी नमक आदि रस त्यागते।
रसपरित्यागी मुनि आतमरस पावते।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।19।।

ॐ ह्रीं रसपरित्याग तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मध्यानयुत शुद्ध स्थान शयन करें।
विविक्त शयनासन तप का पालन करें।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।20।।

ॐ ह्रीं विविक्तशयनासन तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायक्लेश छट्ठा तप जो बहिरंग है।
नानाविध तप करें सदा मुनिवृंद हैं।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।21।।

ॐ ह्रीं कायक्लेश तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरंग तप में प्रायश्चित है प्रथम।
गुरु के पास करें दोषों का आलोचन।।

धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।22।।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्त तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन ज्ञान चरित तप अरु उपचार ये।
पंच विनय के भेद मुक्ति के द्वार हैं।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।23।।

ॐ ह्रीं विनय तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथायोग्य सेवा ही वैय्यावृत्ति है।
तीर्थंकर सम पुण्य प्रकृति संकेत है।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।24।।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्ति तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचभेदयुत कहा गया स्वाध्याय है।
उनसे मिलता ज्ञानामृत का स्वाद है।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।25।।

ॐ ह्रीं स्वाध्याय तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर बाहिर उपधि त्याग जो तप करें।
वे व्युत्सर्ग तपोगुण को ही आचरें।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।26।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ ध्यान तज शुक्लध्यान में मुनि रमें।
वही ध्यान तपरूप तपोगुणयुत कहे।।
धर्मसिन्धु आचार्य इसे पालें सदा।
उन पद में मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ सर्वदा।।27।।

ॐ ह्रीं ध्यान तपोगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शंभु छन्द–

इन बारह तप के साथ-साथ जो आवश्यक गुण को धरते।
समता आवश्यक प्रथम भेद में सामायिक साधन करते।।
आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।28।।

ॐ ह्रीं समताआवश्यकगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस तीर्थंकर का संस्तव इक आवश्यक में माना है।
इसका पालन करने वालों ने आतम निधि पहचाना है।।
आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।29।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवआवश्यकगुणसमन्वितश्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन्दना नाम का आवश्यक जो गुरुजन पालन करते हैं।
परमेष्ठी अथवा प्रतिमा का वन्दन कर आनंद भरते हैं।।
आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।30।।

ॐ ह्रीं वंदनाआवश्यकगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिक्रमण नाम के आवश्यक से व्रत की शुद्धी होती है।
दैवसिक व रात्रिक सम्बन्धी दोषों की शुद्धी होती है।।

आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।31।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणआवश्यकगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावी दोषों का त्याग करें, तो प्रत्याख्यान प्रगट होता।
आहार त्याग या किसी वस्तु के, त्याग का भाव स्वयं होता।।
आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।32।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानआवश्यकगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायोत्सर्ग आवश्यक में तन से ममता का त्याग करें।
कुछ देरी तक या एक वर्ष तक इस मुद्रा में ध्यान करें।।
आचार्य धर्मसागर गुरु ने इस आवश्यक को पाला था।
हम उनको अर्घ्य चढ़ाते हैं उनने निज भवदुख टाला था।।33।।

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गआवश्यकगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट आवश्यक के साथ और त्रयगुप्ती का पालन होता।
उसमें मनगुप्ती के पालन से पापों का क्षालन होता।।
श्री धर्मसिन्धु गुरुवर ने इस गुप्ती का पालन सदा किया।
उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ा हमने गुरुगुण का यजन किया।।34।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाणी पर पूरा अनुशासन करने से वचनगुप्ति प्रगटे।
सूरीश्वर इसका पालन कर, आतम गुण में रमते रहते।।
श्री धर्मसिन्धु गुरुवर ने इस गुप्ती का पालन सदा किया।
उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ा हमने गुरुगुण का यजन किया।।35।।

ॐ ह्रीं वचनगुप्तिगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन को बिल्कुल स्थिर करके, जो धर्म-शुक्ल ध्यानी बनते।
वे कायगुप्ति पालन करके, भव भव के दुख को परिहरते।।
श्री धर्मसिन्धु गुरुवर ने इस गुप्ती का पालन सदा किया।
उनके चरणों में अर्घ्य चढ़ा हमने गुरुगुण का यजन किया।।36।।

ॐ ह्रीं कायगुप्तिगुणसमन्वित श्री धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

आओ हम सब करें अर्चना, धर्मसिन्धु आचार्य की।
शांतिसिंधु की परम्परा के, तृतीय पट्टाचार्य की।।
वन्दे गुरुवरम्, वन्दे गुरुवरम्-2।।टेक.।।
पंचाचार धर्म दशविध, बारह प्रकार तप जो करते।
षट् आवश्यक तीन गुप्ति ये छत्तिस गुण पालन करते।।
पूर्ण अर्घ्य का थाल सजाकर, अर्चा है आचार्य की।
शांतिसिन्धु की परम्परा के, तृतीय पट्टाचार्य की।।
वन्दे गुरुवरम्, वन्दे गुरुवरम् - 2।।1।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्गुणसहित श्रीधर्मसागराचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पाञ्जलिः।

जाप्य मंत्र–**ॐ ह्रीं धर्मसागराचार्य परमेष्ठिने नमः।**

(9, 27 या 108 बार जपें)

जयमाला

–शेर छंद–

जैवन्त पूज्य पंच परम गुरू जगत में।
जैवन्त हों परमेष्ठि पाँच प्रभू जगत में।।
जैवन्त हों जिनशासन के धाम जगत में।
जैवन्त हों जिनआगम से मान्य जगत में।।1।।

उन पाँच में अरिहंत सिद्ध आज नहीं हैं।
उन मूर्तियाँ जिनालयों में राज रही हैं।।

आचार्य उपाध्याय साधु आज भी होते।
ये तीन परमेष्ठी सभी के पाप को धोते।।2।।

मुनि-आर्यिका क्षुल्लक व क्षुल्लिका के रूप में।
जो संघ चतुर्विध रखें आचार्य वे कहें।।
उनमें ही धर्मसिन्धु इक आचार्य गुरु हुए।
जो बालब्रह्मचारी यतिवर गुरू हुए।।3।।

गंभीर ग्राम में इन्होंने जन्म लिया है।
अपने पिता व माता को धन्य किया है।।
बचपन से युवावस्था में आते ही तुमने।
आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण किया तुमने।।4।।

क्षुल्लक की दीक्षा क्रम से तुमने ग्रहण करी।
श्री चन्द्रसिंधु मुनिवर की शिष्यता मिली।।
श्री वीरसिन्धु गुरु से मुनिव्रतों को ले लिया।
निर्ग्रन्थ बन के मोक्षमार्ग को ग्रहण किया।।5।।

चारित्रचक्रि शांतिसिंधु की परम्परा।
तृतीय पट्टाचार्य धर्मसिंधु मुनिवरा।।
नामानुसार गुण भी तुममें अवतरित हुए।
अक्षुण्ण श्रृँखला में सूर्य बन उदित हुए।।6।।

इस आर्षमार्ग की सदैव वृद्धि की तुमने।
दृढ़ भावना से धर्म की समृद्धि की तुमने।।
जयमाला के माध्यम से है पूर्णार्घ्य समर्पण।
है ''चन्दनामती'' का श्रीगुरु के पद नमन।।7।।

जयशील हो चिरकाल तक ये वेष तुम्हारा।
संसार को मिलता रहे आशीष तुम्हारा।।
आचार्य धर्मसागर जयमाल को गाऊँ।
निज रत्नत्रय की प्राप्ति हित पूर्णार्घ्य चढ़ाऊँ।।8।।

आचार्य वीरसागर के शिष्य को नमन।
शिवसिन्धु जी के पट्ट पर अभिषिक्त को नमन।।
चउसंघ के नायक गुरू को अर्घ्य है अर्पण।
पूर्णार्घ्य के माध्यम से है सर्वस्व समर्पण।।9।।

ॐ ह्रीं आचार्य श्री धर्मसागरमुनीन्द्राय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

।।इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः।।

प्रशस्ति

-दोहा-

सदी बीसवीं के प्रथम, शान्तिसागराचार्य।
उनके पट्टाधिप प्रथम, वीरसागराचार्य।।1।।

वीरसिन्धु के शिष्य अरु, तृतीय पट्टाचार्य।
जिनशासन के रत्न थे, धर्मसागराचार्य।।2।।

उन गुरु के गुणगान में, मैंने रचा विधान।
जन्मशताब्दी वर्ष में, यह कृति महिमावान।।3।।

गणिनी माता ज्ञानमति, की शिष्या अज्ञान।
नाम चन्दनामति मिला, मेरा पुण्य महान।।4।।

वीर अब्द पच्चीस सौ, उनतालिसवाँ वर्ष।
शुक्ल चतुर्थी चैत्र की, लिखा इसे मन हर्ष।।5।।

धरती पर जब तक रहे, जैनधर्म का वास।
धर्मसिन्धु गुणगान का, बना रहे इतिहास।।6।।

जीवन में गुरु चरण की, मिले सदा ही छांव।
गुरूभक्ति ही है यहाँ, भवसागर की नाव।।7।।

आरती

-ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

तर्ज–झुमका गिरा रे.....

आरति करो रे.....
श्री धर्मसिन्धु आचार्यप्रवर की आरति करो रे।। आरति करो .....।।टेक.।।
राजस्थान जिला बूंदी गम्भीरा नगरी जन्म लिया।
पौष शुक्ल पूनम तिथि में उमरावबाई को धन्य किया। आरति करो ...।।
पितु बख्तावर के प्रिय नन्दन की आरति करो रे। श्री धर्मसिन्धु.....।।1।।
चन्द्रसागराचार्यकल्प से क्षुल्लक की दीक्षा पाई।
ग्राम फुलेरा वीरसिन्धु से ऐलक की पदवी पाई।। आरति करो .....।।
उन तपोमूर्ति मुनिवर की सब मिल आरति करो रे।।श्री धर्मसिन्धु.....।।2।।
कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी, श्री वीरसिन्धु तव प्रतिभा लख।
मुनिदीक्षा दे धर्मसिन्धु कह, शिवपथ का देते मारग।। आरति करो .....
उन धर्ममूर्ति गरिमायुत गुरु की आरति करो रे। श्री धर्मसिन्धु.....।।3।।
दो हजार पच्चिस संवत् फाल्गुन सुदि अष्टमि दिन प्यारा।
संघ चतुर्विध ने आचार्य, बनाकर की जयजयकारा।। आरति करो ...।।
उन तृतीय पट्टाचार्य गुरू की आरति करो रे।। श्री धर्मसिन्धु.....।।4।।
ऐसे महामना गुरुवर से, श्रमण संस्कृती पुष्पित है,
आज नहीं निज काया से, यशकाया फिर भी जीवित है।। आरति करो...।।
गुरुभक्ति से 'इन्दू', मुक्ति प्राप्ति हित आरति करो रे।। श्री धर्मसिन्धु.....।।5।।

भजन

तर्ज–सुहानी जैनवाणी.....

दिगम्बर प्राकृतिक मुद्रा, विरागी की निशानी है।
कमण्डलु पिच्छिधारी नग्न मुनिवर की कहानी है।। टेक.।।
दिशाएँ ही बनीं अम्बर न तन पर वस्त्र ये डालें।
महाव्रत पाँच समिति और गुप्ती तीन ये पालें।।
त्रयोदश विधि चरित पालन करें जिनवर की वाणी है।। कमण्डलु.....।।1।।
बिना बोले ही इनकी शान्त छवि ऐसा बताती है।
मुक्ति कन्यावरण में यह ही मुद्रा काम आती है।।
मोक्षपथ के पथिकजन को यही वाणी सुनानी है। कमण्डलु.....।।2।।
यदि मुनिव्रत न पल सकता तो श्रावक धर्म मत भूलो।
देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा परम कर्तव्य मत भूलो।।
बने मति 'चन्दना' ऐसी यही ऋषियों की वाणी है।। कमण्डलु.....।।3।।

भजन

तर्ज –वन्दन शत शत बार है.....

मेरा नम्र प्रणाम है,
महावीर के लघुनंदन को मेरा नम्र प्रणाम है।
कलियुग में भी जिनका दर्शन करता जग कल्याण है।
महावीर के लघुनंदन को मेरा नम्र प्रणाम है।।टेक.।।
जिनके तप की कथा सदा, ग्रन्थों में पढ़ी पुरानी है।
कवियों ने जिन मुनियों की, कविता में कही कहानी है।।
भारत की धरती ही उन, सन्तों की मानो खान है।
महावीर के लघुनंदन को मेरा नम्र प्रणाम है।।।1।।

सदी बीसवीं में गुरु शांतीसागर प्रथमाचार्य हुए।
घोर तपस्या करके युग को, कई संत मुनिराज दिये।।
तभी आज मुनियों के दर्शन ही मानो शिवधाम हैं।
महावीर के लघुनंदन को मेरा नम्र प्रणाम है।।2।।

काय में उत्तम बल नहिं है, फिर भी चर्या प्राचीन है।
वही मूलगुण वही परीषह, शास्त्रों के आधीन हैं।।
तभी ''चन्दनामति'' उन गुरु के पद में ही शिवधाम है।
महावीर के लघुनंदन को मेरा नम्र प्रणाम है।।3।।

भजन

तर्ज–जिंदगी प्यार का गीत है.....

जन्म मानव का पाया है जो,
उसे सार्थक तो करना पड़ेगा।
वंश उत्तम ये पाया है जो,
मूल्यांकन तो करना पड़ेगा।।टेक.।।
कई जन्मों का पुण्य खिला, जिससे जिनधर्म उत्तम मिला।
गुरु का उपदेश ऐसा मिला, ज्ञान का दीप मन में जला।।
पाके सम्यक्त्व के रत्न को,
शिव डगर पे तो चलना पड़ेगा।।1।।
शुद्ध भोजन करोगे यदी, बुद्धि अच्छी बनेगी तभी।
छानकर जल पिओगे यदी, वाणी पावन बनेगी तभी।।
मन की शुद्धी के हेतू तुम्हें,
स्वच्छ भोजन तो करना पड़ेगा।।2।।

जाति औ कुल की रक्षा करो, शास्त्र औ गुरु की शिक्षा वरो।
दान-पूजन के योग्य बनो, आगे दीक्षा के योग्य बनो।।
शुद्ध खानदान रखना है यदि,
जाति में ब्याह करना पड़ेगा।।3।।
अपने बच्चों को संस्कार दो, पिण्ड शुद्धी का उपहार दो।
मुक्ति का मार्ग साकार हो, निज व पर का भी उपकार हो।।
''चन्दनामति'' सुनो भाइयों!
तुम्हें कुल शुद्धि रखना पड़ेगा।।4।।

भजन

सुनो हम कथा सुनाते हैं-2,
प्रथमाचार्य शांतिसागर की, गाथा गाते हैं।। सुनो...।।टेक.।।
दक्षिण भारत के भोजग्राम, में भीमगौंड पाटिल थे।
वे सत्यवती पत्नी के संग, सुखदुख में शामिल थे।।
उन्हीं का पुण्य बताते हैं,
इस पुत्र को दे जन्म बड़ा वे हर्ष मनाते हैं।।सुनो..।।1।।
सन् अट्ठारह सौ बहत्तर, आषाढ़ कृष्ण षष्ठी थी।
तेजस्वी बालक को पा, माँ सत्यवती हर्षी थीं।
दान तब पिता लुटाते हैं,
नाम सातगौंडा रख पुत्र का, उत्सव मनाते हैं।।सुनो..।।2।।
शैशव से बाल्य अवस्था, पाई बालक ने जैसे।
इक कन्या के संग उसका, रच दिया ब्याह बस सबने।।
दुखद इक बात बताते हैं,
पत्नी की मृत्यू छह मास के ही बाद दिखाते हैं।।सुनो..।।3।।
इस बाल विवाह से उनका, संबंध न कोई रहा था।
ब्रह्मचारी रहकर उनने, दूजा न विवाह किया था।।
सातगौंडा बतलाते हैं,

जिनधर्म की रक्षा के लिए वे आगे आते हैं।।सुनो..।।4।।

पितुमात के मोह के कारण, घर त्याग नहीं कर पाए।
लेकिन स्वाध्यायादिक कर, नित मन वैराग्य बढ़ाए।।
धर्म का पथ अपनाते हैं,
वे ''चंदनामति'' माता-पिता का मन न दुखाते हैं।।सुनो..।।5।।

भजन

तर्ज –माई रे माई.....

श्री आचार्य वीरसागर की, ज्ञानवाटिका प्यारी।
उनके ज्ञान पुष्प से तुम, महका लो अपनी क्यारी।।
जय हो वीर सिन्धु की जय, जय हो वीर सिंधु की जय.।।टेक.।।

सदी बीसवीं के श्री प्रथमाचार्य शान्तिसागर हैं।
उनके प्रथम शिष्य व पट्टाचार्य वीरसागर हैं।।
उनकी शिष्या ज्ञानमती जी की, महिमा बड़ी निराली।
उनके ज्ञानपुष्प से तुम, महका लो अपनी क्यारी।।
जय हो वीरसिन्धु की जय.....4।।1।।

महाराष्ट्र के वीर ग्राम में, जन्म हुआ था इनका।
शान्तिसिंधु के दर्शन करके धन्य किया तन मन था।।
बाल ब्रह्मचारी यति बनकर, किया तपस्या भारी।
उनके ज्ञान पुष्प से तुम, महका लो अपनी क्यारी।।
जय हो वीरसिन्धु की जय.....4।।2।।

शरदपूर्णिमा दो हजार ग्यारह को दीप जलाया।
गणिनी माता ज्ञानमती ने नूतन वर्ष चलाया।।
इसीलिए 'चन्दनामती' इस वर्ष की महिमा निराली।
उनके ज्ञान पुष्प से तुम, महका लो अपनी क्यारी।।
जय हो वीरसिन्धु की जय.....4।।3।।

मण्डल का नक्शा